प्रवचन

परमहंसश्रीहंसानंदजीसरस्वतीदण्डीस्वामीजी

विषय तालिका

CD # 46 * JUL – A 2011 *

SN	Title	Min	Coding			Contents	
1	01.mp3	32	⊕			अध्यात्म रामायण :: प्रथम सर्ग :: राम हृदय :: सीताजी द्वारा हनुमानजी को **भगवान राम के नि०नि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परं ब्रह्म सच्चिदानंद अद्वयं, सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं सत्ता मात्रं अगोचरं । आनंदम् निर्मलं शांतं निर्विकारं निरंजनं, सर्व व्यापिन आत्मानं स्वप्रकाशं अकल्मषं ।।'	
2	02.mp3	35	⊕	⊕		**गीता २/१६** :: अर्जुन एक सत् है और दूसरा असत्। जो सदा रहे वह **सत्** है और जो दिखाई पड़े पर सदा न रहे वह **असत्** है जैसे रज्जु में सर्प, स्वप्न द्रष्टा में स्वप्न अथवा पुरुष की छाया जो दिखाई पड़ती है पर होती नहीं, ऐसे ही आत्मारूपी अधिष्ठान में ये संसार झूठा ही प्रतीत होता है। **माया के सम्बन्ध में ३ मत** हैं :- १ **श्रौत** - **अजातवाद** - जो संसार को असत् /छाया/माया/स्वप्न मानते हैं जिसकी कभी उत्पत्ति ही नहीं है २ **यौक्तिक** - जो न्यायशास्त्र या युक्ति प्रधान हैं वे इस संसार को **अनिर्वचनीय** कहते हैं जिसे न सत् कहा जाय और न असत क्योंकि आत्मज्ञान होने पर ये जगत नहीं रहता अतः सत् नहीं है और बन्ध्या पुत्र के समान असत् भी नहीं क्योंकि दिखाई पड़ता है ३ **लौकिक** - जो इस संसार को ही सत्य मानते हैं।	** 1 **
3	03.mp3	33	⊕	⊕	⊕	**गीता २/१६-१८** :: अर्जुन एक सत् है और दूसरा असत्। जो सदा रहे वह **सत्** है और जो दिखाई पड़े पर सदा न रहे वह **असत्** है जैसे रज्जु में सर्प तथा स्वप्नद्रष्टा में स्वप्न। आत्मा सत्घन-चित्घन-आनंदघन है उसमें कोई वस्तु प्रवेश नहीं कर सकती । ये जगत आत्मारूपी दर्पण में छाया चित्र के समान दिखाई पड़ता है। अविनाशी तू उसे जान जो 'आभूषणों में स्वर्ण के समान' सर्वत्र व्यापक है। उसका नाश करने में काल सहित कोई भी समर्थ नहीं है। वह अप्रमेय है यानि इन्द्रियों का विषय नहीं है अपितु वह इन्द्रिय और विषय दोनों को जानता है। ये देह नाशवान हैं पर देही नहीं।	** 2 **
4	04.mp3	30	⊕			अ०रा० :: प्रथम सर्ग :: राम हृदय :: सीताजी द्वारा हनुमानजी को भगवान राम के **निनि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परं ब्रह्म ...'और मेरा स्वरूप भी इस प्रकार है :: **'मामूविद्धि मूलप्रकृतिं सर्गस्थित्यंतकारिणी,तस्य सन्निधिमात्रेण सृजामेद मतन्विता'** राम के सानिध्य से मैं जड़ माया ही जगत के रूप में परिणित हो जाती हूँ। ये जगत ब्रह्म का विवर्त एवं माया का परिणाम है।	
5	05.mp3	44	⊕	⊕		**गीता २/१६-१९** :: अर्जुन एक सत् है और दूसरा असत्। जो सदा रहे वह **सत्** है और जो दिखाई पड़े पर सदा न रहे वह **असत्** है जैसे रज्जु में सर्प तथा स्वप्नद्रष्टा में स्वप्न। अर्जुन हमारा तुम्हारा आत्मा सत्य ज्ञान आनंद से पूर्ण है इसीलिये आत्मा को पुरुष कहते हैं और संसार छाया है, झूठा है। छाया रूप ये संसार अधिष्ठान आत्मा का नाश नहीं कर सकता। ये देह ही जन्मने-मरने वाले हैं किन्तु आत्मा अजन्मा अप्रमेय अविनाशी है। आत्मा न मरता है न किसी को मारता है वह असंग अकर्म है	** 3 **
6	06.mp3	38	⊕			अध्यात्म रामायण :: सीताजी द्वारा हनुमानजी को **भगवान राम के नि०नि० स्वरूप का निरू०** - 'रामं विद्धि परं ब्रह्म'....और मेरा स्वरूप भी इस प्रकार है :: **'मामूविद्धि मूलप्रकृतिं सर्गस्थित्यंतकारिणी,तस्य सन्निधिमात्रेण सृजामेद मतन्विता'** राम के सानिध्य से मैं जड़ माया ही जगत के रूप में परिणित हो जाती हूँ। ये जगत ब्रह्म का विवर्त एवं माया का परिणाम है।**अद्भुत रामायण**	
7	07.mp3	33	⊕	⊕		**गीता २/२०-२२** :: आत्मा का जन्म नहीं होता है इसीलिये आत्मा का मरण भी नहीं होता है क्योंकि मृत्यु उसी की होती है जिसका जन्म होता है। ये शरीर ही जन्मने-मरने वाले हैं। आत्मा तो शरीर के भीतर बैठकर देखने वाला केवल साक्षी चेतन अकर्म एवं गुणातीत है। आत्मा अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है। शरीर के मारे जाने पर भी नहीं मारा जाता। जो ईश्वर और गुरु कृपा से ऐसा जानता है कि आत्मा नाश रहित, नित्य, अजन्मा और अव्यय है वह कैसे किसी को मारता अथवा मरवा सकता है। आत्मा अकर्म और असंग है। देहधारी आत्मा पुराने वस्त्र के समान पुराने देह त्याग कर नये देह धारण करता है।	** 4 **
8	08.mp3	30	⊕			सामवेद :: छा०उ० :: ७तवाँ अ०:: नारदजी का अपने अग्रज सनत्कुमार जी से ब्रह्म ज्ञान की प्रार्थना तथा सनत्कुमार जी के पूछने पर अपने अध्ययन की विस्तार से वर्णन।	
9	09.mp3	31	⊕	⊕		**गीता २/२२-२५** :: ये देह जीवात्मा का एक वस्त्र है व जीवात्मा वस्त्रधारी है वस्त्रधारी कभी वस्त्र नहीं हो सकता। देह जड़ है और देहधारी चेतन इन देहों का द्रष्टा है। जीवात्मा वहीं रहता है केवल देह बदलते रहते हैं। ये जीवात्मा तो मैं सच्चि०ही हूँ जो अमृत रूप है। इस अविनाशी आत्मा का नाश करने में कोई समर्थ नहीं है क्योंकि आत्मा अच्छेद्य अदाह्य अक्लेद्य अशोष्य अचिन्त्य है किन्तु आत्मा चित्त के चिन्तन को देखता है। आत्मा द्रष्टा साक्षी है, नित्य अचल व्यापक सनातन अव्यक्त और अविकारी है अतः अर्जुन तुझे शोक करना उचित नहीं है।	** 5 **
10	10.mp3	25	⊕	⊕		नारद सनतकुमार सम्वाद :: **भूमा तत्त्व निरूपण** :: भूमा ही आत्म तत्त्व है, ब्रह्म तत्त्व है एवं सुख का समुद्र है, भूमा माने महान उसे ही ब्रह्म कहते हैं। भूमा के ज्ञान से जीव मुक्त हो जाता है। जहाँ देह इ०म०वु०प्रा० की पहुँच नहीं है वह भूमा तत्त्व है, वह देह इ०म०वु०प्रा० का प्रकाशक है। जो इन्द्रियों के द्वारा जाना जाता है वह अल्प है, वह ब्रह्म की तिलभर जगह में पड़ा रहता है। अल्प मर्त्य है व भूमा अमृत है, वही हमारा तुम्हारा आत्मा है।	
11	11.mp3	34	⊕	⊕		**गीता २/२६-२८** :: आत्मा अमृत है व देह नाशवान है। यदि तू इस आत्मा को सदा जन्मने-मरने वाला मानता हो तो भी हे महाबाहो तू इस प्रकार शोक करने योग्य नहीं है क्योकि जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु ध्रुव है और मरे हुए का जन्म निश्चित है इसलिये भी बिना उपाय वाले विषय में तेरा शोक करना व्यर्थ है। अर्जुन जन्म से पहले सभी प्राणी अव्यक्त है और मरने के बाद भी अप्रकट होने वाले हैं, केवल बीच में ही प्रकट हैं। जो आदि-अन्त में नहीं है पर मध्य में दिखाई देता है वह भ्रम या माया ही होता है - जैसे स्वप्न और जागृत का संसार जो आदि अंत में नहीं होते, दोनों निद्रारूपी माया से होते हैं।	** 6 **
12	12.mp3	43	⊕	⊕		**गीता २/२५-२६** :: मेरी माया को मेरे भक्त ही जान सकते हैं, सहस्त्रों में कोई एक ही होता है जो मुझे तत्त्वतः/यथार्थतः जान पाता है, अधिकतर लोग संसार में ही सत्-सुख बुद्धि रखते हैं। मुझे जानकर मेरा भक्त संसार से मुक्त हो जाता है। परम सत्य तो यही है कि न संसार की उत्पत्ति है न नाश, ये संसार भ्रम मात्र है, बन्ध-मोक्ष भी माया है, अपने को न जानना ही बन्ध है। कोई महापुरुष ही इस आत्मा को आश्चर्य से देखता है, कोई आश्चर्य की भाँति वर्णन करता है, कोई आश्चर्य से सुनता है और कोई-२ तो सुनकर भी इसे नहीं जानता।	** 7 **
13	13.mp3	53	⊕	⊕		**गीता २/२९-३०** :: हमारा तुम्हारा आत्मा आश्चर्यरूप है, चमत्कार है, क्योंकि आत्मा रूपी अधिष्ठान के ऊपर ही ये जा०स्व०सु० प्रपंच दीख रहा है - रज्जु में सर्प की भाँति अथवा पुरुष में छाया के समान। हम आत्मा के ऊपर ये माया का चमत्कार दीख रहा है । स्वप्न द्रष्टा को स्वप्न नहीं छूता है। ये जगत स्वप्न की भाँति ही झूठा है। हमारा स्वरूप द्रष्टा ब्रह्म है व दृश्य माया है - यही वेदान्त का निर्णय है। अर्जुन, सभी देहों के भीतर रहने वाला एवं सभी देहों को देखने वाला देही नित्य एवं अवध्य है।	** 8 **
14	14.mp3	41	⊕	⊕		**गीता २/३०** :: देहे और देही २ ही तत्त्व हैं, दिखाई पड़ने वाले देह हैं व सभी देहों के भीतर बैठकर देखने वाला देही सच्चि० परमात्मा है वह मैं ही हूँ। देह के अंदर मैं आत्मा और बाहर परमात्मा हूँ। देह जड़ हैं व देही चेतन द्रष्टा है। देह जन्मने- मरने वाले हैं पर देही नित्य अवध्य अविकारी है।	** 9 **
15						**गीता १५/१** :: अर्जुन ये संसार एक वृक्षरूप है जिसे पीपल-वृक्ष कहते हैं इसका मूल ऊपर व शाखा नीचे की ओर है, अज्ञानी जन जो तत्तवतः इस वृक्ष को नही जानते इसे अव्यय बताते हैं। मूल तो सच्चि०ब्रह्म है वही सबसे ऊपर है जिससे ये संसार उत्पन्ना	**

	15.mp3	43	⊕	⊕	⊕	हुआ है। शुद्ध ब्रह्म से नहीं अपितु माया विशिष्ट ब्रह्म यानि ईश्वर से ही जगत उत्पन्न हो सकता है। सच्चि०ब्रह्म एक अद्वितीय है। माया विशिष्ट ब्रह्म अथवा ईश्वर ने ही माया के सम्बन्ध से विश्व-विराट रूप बना लिया है वही जगत का जन्मदाता उर्ध्वमूल है। परमब्रह्म **मूल/बीज** है - महत्तत्तव/ब्रह्मा **मुख्य शाखा** है - अहंतत्तव/मन **उपशाखा** है - पंचतन्मात्राऐं **प्रशाखा** हैं - पंचभूत से **ब्रह्माण्ड** -धर्म अधर्म कर्म **पुष्प** हैं - सुख दुःख **फल** हैं। फल लगने पर वृक्ष पूर्ण हो जाता है, इस प्रकार ये संसार वृक्ष तैयार हो गया। ये संसार अचल है, इस प्रवाह रूप जगत को अश्वथ (यानि सदा न रहने वाला अथवा अस्थिर) कहते हैं।	Imp **
16	16.mp3	44	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१** :: अर्जुन एक संसार-वृक्ष है व एक संसार का मूल या बीज है। बीज और मूल दोनों अनादि हैं।पहले बीज हुआ अथवा मूल, इसका निर्णय नहीं हो सकता। इस संसार का मूल सबसे ऊपर सच्चि०ब्रह्म है और जो उसके बाद होने वाले उसे अधः कहा जाता है वह **मुख्य शाखा** ब्रह्मा है। **ब्रह्मोपनिषद में सृष्टिक्रम** :- सत् स्वरूप **ब्रह्म** में कल्पित **प्रकृति**/माया/छाया - असत है क्योकि जिसकी उत्पत्ति होती है वह असत् होता है,अव्यक्त माया से महत् तत्त्व या समष्टि बुद्धि/ब्रह्मा...दृश्य जगत।जा०स्व०सु० का द्रष्टा ब्रह्म है, वही मेरा स्वरूप है-ऐसा जानना ही 'वेद के तातपर्य को जानना है' और यही मोक्ष है।	** Imp **
17	17.mp3	36	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१-३** ::१ इस संसाररूपी पीपलवृक्ष का मूल अविनाशी परमात्मा है तथा यह अनादि वृक्ष सदा बदलने वाला है। यज्ञादिक कर्मों द्वारा संसारवृक्ष की रक्षा और वृद्धि करने वाले वेद पत्ते हैं जो परमात्मा को ढके रहते हैं। नश्वर संसार को त्याग कर, जा० स्व०सु०-माया के द्रष्टा ब्रह्म को स्व-स्वरूप जानना ही वेद का तात्पर्य है २ इस संसारवृक्ष की तीनगुणरूप जल से बढ़ी हुई एवं विषय-भोग रूप कोपलों वाली देव-मनुष्य-तिर्यक् योनिरूप शाखाऐं ऊपर-नीचे सर्वत्र फैली हुई हैं तथा मनुष्यलोक में कर्मानुसार बाँध ने वाली ममता और वासनारूप जड़ें भी ऊपर-नीचे सभी लोकों में व्याप्त रहीं हैं। ३ जैसा ऊपर बताया है, विचार करने पर संसार का ऐसा रूप नहीं है, आदि-अन्त रहित ये जगत झूठा है, ये अश्वथवृक्ष अज्ञान के कारण दृढ़मूल हुआ है। इसे असंगरूप तलवार की वैराज्ञरूप तेज़ धार से ही नष्ट किया जा सकता है। 'संसार मिथ्या है' यह जानना ही संसारवृक्ष को काटना है।	** Imp **
18	18.mp3	41	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/४-५** :: सबसे ऊपर मायोपाधिक ब्रह्म है जिसमें रज्जु में सर्पवत् जगत की उत्पित्ति-स्थिति-प्रलय होती है। रज्जु के अज्ञान से ही सर्प दिखाई पड़ता है, वह झूठा ही होता है ऐसे ही ये जगत भी स्वप्नवत् झूठा है क्योंकि दृश्य झूठा होता है केवलद्रष्टा ही सत्य है। संसार को झूठा जानना ही इसका छेदन है। ४ इस संसाररूपी वृक्ष का छेदन करके संसार के आधार- अधिष्ठान को खोजना चाहिये जहाँ पहुँच कर जीव का जन्म-मरण नहीं होता। उसी आदिपुरुष नारायण की मैं शरण में हूँ जिससे इस संसार का विस्तार हुआ है। ५ जिनका देहाभिमान और मोह-ममता नष्ट हो गयी है, जिनकी विषयों से असक्ति नष्ट हो गयी है व जो परमात्मा में स्थिति हैं और पूर्णतया निष्काम हैं वे सुख-दुःख से निर्द्वन्द्व ज्ञानीजन अविनाशी परमपद को प्राप्त होते हैं।	** Imp **
19	19.mp3	40	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/६** :: ६ जिस परमपद को सूर्य प्रकाशित नहीं करता, चन्द्रमा वौर अग्नि का प्रकाश भी वहाँ नहीं पहुँचता, जहाँ जाकर मनुष्य का पुनरागमन नहीं होता, हे अर्जुन! वही मेरा परमधाम अनंत अखंड ज्ञान प्रकाश है जिसके प्रकाश से ही सारा ब्रह्माण्ड ब्रह्मा विष्णु महेश भी प्रकाशित हो रहे हैं। देह के भीतर मैं ही जीवात्मा हूँ और मैं ही देह के बाहर अखंड परिपूर्ण परमात्मा हूँ।	** Imp
20	20.mp3	40	⊕	७ भगवान द्वारा एक श्लोक में संपूर्ण ज्ञान		**गीता १५/६-७** :: मेरा स्वरूप सच्चि०है वही जीव का भी स्वरूप है परन्तु अविद्या उपाधि के कारण जीव स्व-स्वरूप को भूल गया है और दुःखी है अतः अर्जुन मैं तुझे वही याद दिलाता हूँ। ६ सूर्य चन्द्र अग्नि का जड़ प्रकाश मुझे नहीं प्रकाशता पर मैं अनंत अखंड ज्ञानस्वरूप सच्चि०ही इन सबका प्रकाशक/द्रष्टा हूँ। ७ इस देह में जीवात्मा मेरा ही सनातन अंश है और वही प्रकृति के कार्य मन और इन्द्रियों को धारण और आकर्षित करता है। संपूर्ण जगत पंचभूतों का ही कार्य है व सभी जीव पाँच इन्द्रिय-विषय सुख में भ्रमवश आसक्त है जो वस्तुतः मेरे आनंद स्वरूप का ही आभास मात्र है। जीवात्मा-परमात्मा अभेद हैं, ब्रह्मा से तृणपर्यन्त यह जगत छाया के समान झूठा है व इसका द्रष्टा-साक्षी अखंड ज्ञानस्वरूप केवल मैं ही सत्य हूँ।	** Imp **
21	21.mp3	32	⊕			भगवान के ज्ञान के साधन **४ कृपाऐं** हैं:- १ ईश्वर कृपा २ गुरुकृपा ३ वेदकृपा ४ आत्मकृपा	१
22	22.mp3	36	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/६-८** :: ८ जिसे सूर्य चन्द्र प्रकाशित नहीं कर सकते पर जो उन्हें प्रकाशता है वह मेरा परमधाम है। ब्रह्मा से तृण पर्यन्त ये जगत माया से कल्पित है, एक ब्रह्म ही सत्य है अर्जुन वही तेरा भी स्वरूप है। झूठी चीज़ सत्य के अज्ञान से ही दिखाई पड़ती है पर होती नहीं। आत्मा अधिष्ठान में अध्यासरूप ये जगत माया से कल्पित है यानि अधि०ब्रह्म में मिथ्या ही प्रतीत होता है ७ जीव का स्वरूप :- देहों में जो जीवात्मा है वह मेरा ही अंश व चेतन स्वरूप है, सनातन है और दृश्य संसार माया का अंश होने से मायारूप है। जीव अपना स्वरूप न जानने से देह में अभिमान करता है और कर्ता-भोक्ता बनकर जन्मता -मरता रहता है, जीव का स्वरूप सच्चि०ब्रह्म/आत्मा है पर देह में रहकर भी वह उसे छूता तक नहीं ८ देहादि का स्वामी जीवात्मा जिस देह का त्याग करता है उससे मन सहित इन्द्रियों को ग्रहण करके जिस देह को प्राप्त होता है उसमें चला जाता है ठीक उसी प्रकार जैसे वायु गन्ध को ग्रहण करके ले जाता है। अतः तू सर्वकाल में मेरा ही स्मरण कर, तू मुझे ही प्राप्त होगा।	** Imp **
23	23.mp3	26				भगवान के ज्ञान के साधन **४ कृपाऐं** हैं:- १ ईश्वर कृपा २ गुरुकृपा ३ वेदकृपा ४ आत्मकृपा	२
24	24.mp3	30	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/७-११** :: ७ मेरा ही अंश जीव सनातन है जो देह में अभिमान कर लेता है, उसके कर्म सूक्ष्मरूप से संस्कार-रूप में रहते हैं और उसका प्रारब्ध निर्धारित करते हैं। प्रकृति में स्थित मन एवं इन्द्रियाँ मेरे प्रतिबिम्ब पड़ने से अपना-२ कार्य करने लगते हैं। ८ देहादि का स्वामी जीवात्मा/चिदाभास जिस देह का त्याग करता है उससे मन सहित इन्द्रियों को ग्रहण करके अपने कर्म-वासनानुसार प्राप्त जिस देह को प्राप्त होता है ७तवें मास में उसमें चला जाता है ठीक उसी प्रकार जैसे वायु गन्ध को ग्रहण करके ले जाता है ९ यह जीवात्मा मन एवं इन्द्रियों आदि के आश्रय से ही विषयों का सेवन करता है यानि १६ तत्त्व वाले सूक्ष्म देह को अधिष्ठान बनाकर संसार के विषयों को भोगता है १० अज्ञानीजन देह में रहते हुए, विषयों को भोगते हुए व देह छोड़ते हुए भी अपने स्वरूप को नहीं जानते, केवल ज्ञान-नेत्र वाले विवेकशील ही स्वस्वरूप को तत्त्व से जानते हैं ११ यत्न करने पर योगीजन भी अपने अंतःस्थित आत्मा को तत्त्व से जानते है, पर जिन्होंने चित्त शुद्ध नहीं किया यत्न करने पर भी वे नहीं जानते	** Imp **
25	25.mp3	33	⊕			भगवान के ज्ञान का साधन भग० की वाणी **'कर्म-उपासना-ज्ञान'** त्रिकाण्डमय वेद हैं, विहितकर्म - **सकाम**-संसार प्राप्ति के लिये, **निष्काम**-भग०को पाने के लिये, विकर्म और अकर्म। सामान्य और विशेष कर्म निरूपण।	
26	26.mp3	37	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१२-१४** :: विभूति वर्णन :: १२ सूर्य चन्द्र अग्नि का तेज, जिससे वे जगत को प्रकाशित कर रहे हैं, वह मेरा ही आभास रूप तेज है, १३ इस पृथ्वी में प्रविष्ट होकर मैं पृथ्वी को धारण करता हूँ , उसे कठिनता प्रदान हूँ और बाँधकर रखता हूँ तथा मैं चन्द्रमा को रस प्रदान करता हूँ और उसमें प्रविष्ट होकर सभी औषधियों को पुष्ट करता हूँ १४ अर्जुन मैं सबके जठर में रहता हूँ तथा प्राण अपान समान वायु से प्रज्ज्वलित होकर जठराग्नि को तीव्र करके मैं वैश्वानर अग्नि के रूप में ४ प्रकार के अन्न को पचाता एवं रस बनाता हूँ :: **गर्भोपनिषद का सविस्तार वर्णन ::**	** Imp **
27	27.mp3	26	⊕			जीव के हृदय में **'मल विक्षेप आवरण'** ३ दोष हैं जो भगवान के दर्शन में व्यवधान हैं, **त्रिकाण्डमय वेद** से इनकी निवृत्ति हो जाती है। निद्रा रूपी माया एवं उसकी जा०स्व०रूपी बरसात ये संसार ही भगवान के दर्शन में व्यवधान है। निष्काम कर्म से मल, उपासना से मन की चंचलता व ज्ञानकाण्ड से अज्ञान-रूपी आवरण का नाश हो जाता है :: **आर्त भक्त का वर्णन ::**	
28	28.mp3	43	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१५** :: अर्जुन मैं स्वभाव से ही सच्चिदानंद स्वरूप हूँ, मुझ अखंड सुख सिन्धु में मायारूपी पवन से संसार रूपी लहरें उठती हैं और विलीन हो जाती हैं। मैं सच्चि०ही सत्य हूँ एवं मेरे अधिष्ठानपने में पिण्डरूपी शरीर पैदा होकर नष्ट होते रहते है। जीवात्मा के रूप में मैं ही सबके हृदय में विद्यमान हूँ व सबकी आखों से मैं ही देख रहा हूँ। मुझ द्रष्टा-साक्षी में कर्म नहीं हैं, सभी कर्म प्रकृति/माया राज्य में हैं। ये द्वैत जगत माया मात्र है और माया माने छाया अथवा झूठा। मुझसे ही स्मृति ज्ञान और संशय-विपर्यय का अपोहन होता है। सभी वेदों से मैं ही वेद्य हूँ तथा वेदान्त कर्ता और वेदों को ज्ञाता भी मैं ही हूँ।	** Imp **
29	29.mp3	51				*No sound*	
30	30.mp3	31	⊕			? *Continuation of* **कर्मकाण्ड** :: वेद विहित कर्म ही धर्म हैं :-१ विशेष कर्म - वर्ण आश्रम पदाधिकार के अनुसार २ सामान्य कर्म - अहिंसा सत्य अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, अक्रोध, गुरु शुश्रुषा, **शौचं** -निरूपण, दान की महिमा - **द्रौपदी चीर हरण प्रसंग**	